3 एस 0 सी0 आर 0 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

द एटलस साइकिल इंडस्ट्रीज लिमिटेड, सोनीपत
बनाम
उनके कर्मचारी

(बी. पी. सिन्हा, मुख्य न्यायाधीश, के. सुब्बा राव, एन. राजगोपाला अयंगर, जे. आर. मुधोलकर और टी.एल. वेंकटरामा अय्यर, न्यायाधीशगण)

औद्योगिक विवाद–न्यायाधिकरण का गठन सदस्यों की योग्यताएँ उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए योग्य हो। संदर्भ का वैधता की अर्थ–औद्योगिक विवाद (पंजाब संशोधन) अधिनियम, 1957 (1957 का पंज.8), धारा 3 – औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14), धारा 7 (3) (सी) – भारत का संविधान, अनुच्छेद – 14, 165, 217.

14 फरवरी, 1955 को, पंजाब सरकार ने अपीलकर्ता कंपनी और उसके कर्मचारियों के बीच कुछ विवादों को औद्योगिक न्यायाधिकरण के पास भेज दिया, जिसका गठन 29 अगस्त, 1953 को धारा के तहत जारी एक अधिसूचना द्वारा किया गया था। औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 7, जिसके द्वारा जी, एक वकील, को पंजाब के लिए औद्योगिक न्यायाधिकरण के रूप में नियुक्त किया गया था। जब संदर्भ लंबित था तो अधिनियम में संशोधन किया गया। संशोधन अधिनियम के द्वारा अन्य बातों के साथ–साथ मूल अधिनियम के धारा 7 को निरस्त कर दिया गया और इसे 7 ए, 7 बी और 7 सी द्वारा प्रतिस्थापित किया गया एवं धारा 30 में मूल अधिनियम के तहत गठित न्यायाधिकरण के समक्ष लंबित कार्यवाही के संबंध में एक व्यावृति खंड का प्रावधान किया गया है। 19 अप्रैल, 1957 को पंजाब सरकार ने धारा 7 एवं संशोधन अधिनियम की धारा 30 के तहत एक अधिसूचना जारी की और अधिनियम के निरस्त धारा 7 के तहत गठित न्यायाधिकरण के जीवन का विस्तार करती है और सदस्य के रूप में जी का कार्यकाल भी बढ़ाया गया। उसी तारीख को धारा 7 ए के तहत एक नए न्यायाधिकरण के गठन की अधिसूचना जारी की गई और 3 जून 1957 तक जी को पीठासीन अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया । धारा 7 सी (बी) के अन्तर्गत सदस्यों के लिए सेवानिवृत्ति की आयु पैंसठ निर्धारित की गई थी और उस प्रावधान के तहत जी को 03 जून 1957 को सेवानिवृत्त होना था। पंजाब सरकार ने हस्तक्षेप किया और औद्योगिक विवाद (पंजाब संशोधन) अधिनियम, 1957 पारित किया, जिससे सदस्यों की सेवानिवृत्ति की आयु बढ़ाकर सड़सठ वर्ष कर दिया। 3 जून, 1959 को 'जी' के सेवानिवृत्त होने के बाद, पंजाब सरकार ने एक अधिसूचना जारी कर एक अन्य व्यक्ति को औद्योगिक न्यायाधिकरण के पीठासीन अधिकारी के रूप में नियुक्त किया ।

अपीलकर्ता ने संदर्भ की वैधता को चुनौती अन्य बातों के साथ–साथ, इस आधार पर, (1) दी कि ''जी'' इसके योग्य नहीं था कि अधिनियम की धारा 7(3)(सी) के तहत न्यायाधिकरण में नियुक्त किया जाता, जैसा कि वह साठ वर्ष से अधिक उम्र का था और इसलिए, दिनांक 14 फरवरी, 1955 को उसे भेजे गए संदर्भ में वह अक्षम था, और (2) कि औद्योगिक विवाद (पंजाब संशोधन) अधिनियम, 1957, एक व्यक्ति, जी को लाभ पहुंचाने की दृष्टि से पारित किया गया था और इसलिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के उल्लंघनकारी के रूप में अमान्य था ।

अभिनिर्धारित (1) धारा औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के धारा 7(3)(सी) में नियुक्त किए जाने वाले व्यक्ति की उम्र के आधार पर कोई योग्यता शामिल नहीं है, और 29 अगस्त 1953 को जी की नियुक्ति उस धारा के तहत वैध थी ।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 217 के सही अर्थ में उम्र का निर्धारण पद की अवधि से जुड़ा एक शर्त है न कि इसमें नियुक्ति के लिए ''योग्यता'' से।

जी. डी. करकरे बनाम टी.आई. आईशेवड़े, आई.एल.आर. (1952) नाग. 409 और प्रभुदयाल बनाम पंजाब राज्य, ए.आई.आर. 1959 पंजाब । 460, स्वीकृत ।

(2) औद्योगिक विवाद (पंजाब संशोधन) अधिनियम, 1957 संविधान के अनुच्छेद 14, का उल्लंघन नहीं करता, क्योंकि यद्यपि जिस अवसर ने कानून के अधिनियमन को प्रेरित किया वह किसी व्यक्ति को लाभ पहुंचाने के लिए हो सकता है, यह सामान्य अनुप्रयोग का था और इसलिए इसे भेदभावपूर्ण नहीं माना जा सकता था ।

अमीरुन्निसा बनाम मेहबूब, (1953) एस.सी.आर. 404, भेद किया गया।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः 1961 की सिविल अपील संख्या 188.

1957 के संदर्भ संख्या 30 में औद्योगिक न्यायाधिकरण, पंजाब, पटियाला के 11 सितंबर, 1959 के फैसले और आदेश से विशेष अनुमति द्वारा अपील ।

अपीलकर्ताओं के लिए – जी. एस. पाठक, जे. बी. दादाचंजी, ओ. सी. माथुर और रविंदर नारुइन ।

उत्तरदाताओं के लिए बावा शिवचरण सिंह एवं जनार्दन शर्मा ।

न्यायालय के द्वारा 8 फरवरी 1962 को निर्णय दिया गया था ।

न्यायमूर्ति वेंकटरामा अय्यर – यह 1957 के संदर्भ संख्या 30 में औद्योगिक न्यायाधिकरण, पंजाब के 11 सितंबर, 1959 के आदेश के खिलाफ विशेष अनुमति द्वारा एक अपील है, जिसमें अपीलकर्ता द्वारा संदर्भ को सुनने के लिए न्यायाधिकरण का अधिकार क्षेत्र के सम्बंध में उठाए गए कुछ प्रारंभिक आपत्तियों को खारिज कर दिया गया है ।

तथ्य यह है कि 14 फरवरी, 1955 को पंजाब सरकार ने औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के धारा 10(1)(सी), जिसे इसके बाद ''अधिनियम'' के रूप में संदर्भित किया गया है, के तहत अपीलकर्ता और उत्तरदाताओं के बीच कुछ विवाद को निर्णय के लिए औद्योगिक न्यायाधिकरण पंजाब, जालंधर को भेजा। इसे 1955 के संदर्भ संख्या 3 के रूप में क्रमांकित किया गया था । इस न्यायाधिकरण का गठन 29 अगस्त, 1953 को पंजाब सरकार द्वारा जारी एक अधिसूचना द्वारा किया गया था, जो इस प्रकार हैः –

''औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का अधिनियम XIV) की धारा 7 के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, पंजाब के राज्यपाल, पंजाब उच्च न्यायालय के परामर्श से, श्री अवतार नारायण गुजराल एडवोकेट को पंजाब के लिए औद्योगिक न्यायाधिकरण के रूप में नियुक्त किया जाता है।

अपीलकर्ता की ओर से हमारे सामने मुख्य तर्क यह है कि श्री ए.एन. गुजराल उस अधिनियम के धारा 7(3)(सी) के तहत योग्य नहीं थे जिसके तहत 29 अगस्त 1953 को न्यायाधिकरण के रूप में नियुक्त होने के लिए अधिसूचना जारी की गई थी, क्योंकि उस तारीख को उनकी उम्र साठ वर्ष से अधिक थी। जैसा कि 4 जून, 1892 को इनका जन्म हुआ, और इसलिए कोई न्यायाधिकरण अस्तित्व में वैध रूप से गठित नहीं था, और परिणामस्वरूप 14 फरवरी, 1955 को उस तथाकथित न्यायाधिकरण का संदर्भ पूरी तरह से निष्क्रिय था।

वर्ष 1955 का संदर्भ संख्या 3 न्यायाधिकरण के समक्ष लंबित था, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के प्रावधानों को औद्योगिक विवाद (संशोधन और विविध प्रावधान) अधिनियम, 1956 (1956 का अधिनियम संख्या 36) द्वारा संशोधित किया गया था, जो 10 मार्च, 1957 को अस्तित्व में आया। इस संशोधन अधिनियम ने मूल अधिनियम के धारा 7 को निरस्त कर दिया और इसे धारा 7 ए, 7 बी, 7 सी द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। संशोधन अधिनियम की धारा 30 में किसी भी औद्योगिक विवाद के संबंध में कार्यवाही के संबंध में व्यावृति शामिल है जो मूल अधिनियम के तहत गठित न्यायाधिकरण के समक्ष लंबित थी । इस धारा के अंतर्गत कार्य करते हुए पंजाब सरकार ने 19 अप्रैल, 1957 को निम्नलिखित अधिसूचना जारी कीः–

''संख्या 4194–सी. लैब–57/652–आर0ए0– पंजाब सरकार के ज्ञापन संख्या 3078–सी–लैब–57/4224, दिनांक 1 ध/11 मार्च, 1957 की निरंतरता में और औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947

की धारा 7 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए जैसा कि औद्योगिक विवाद (संशोधन और विविध प्रावधान) अधिनियम, 1956 की शुरुआत से पहले लागू था, बाद वाले अधिनियम की सहपठित धारा 30 और अन्य सभी शक्तियां जो उन्हें इस संबंध में सक्षम बनाती हैं पंजाब के राज्यपाल ने अवधि विस्तार किया।

(ए) वह अवधि जिसके लिए औद्योगिक परीक्षण न्यायाधिकरण, पंजाब, जालंधर, का गठन किया गया है और

(बी) उसका एकमात्र सदस्य की नियुक्ति की अवधि अक्टूबर, 1957 के अंतिम दिन तक, या ऐसी तारीख जब 10 मार्च, 1957 से ठीक पहले उक्त न्यायाधिकरण में लंबित औद्योगिक विवादों के संबंध में कार्यवाही का निपटारा किया जाता है, जो भी हो पहले है।''

संक्षेप में कहें तो, इस अधिसूचना ने निरस्त धारा 7 के तहत उसमें निर्दिष्ट अवधि के लिए गठित न्यायाधिकरण के जीवन को बढ़ा दिया और इसने श्री ए.एन. गुजराल का वहां एक सदस्य के रूप में उक्त अवधि के लिए कार्यकाल भी जारी रखा ।

इस अधिसूचना के संदर्भ में अपीलकर्ता का तर्क यह है कि धारा 30 1956 के अधिनियम 36 को धारा 7 के तहत गठित न्यायाधिकरण में किसी सदस्य की नियुक्ति को अधिकृत नहीं करता है और यह अधिसूचना जहां तक जारी है, श्री ए.एन. गुजराल. का 10 मार्च, 1957 को उनका कार्यकाल समाप्त होने के बाद न्यायाधिकरण के सदस्य के रूप में उनका कार्यकाल अनाधिकृत और शून्य था ।

उसी तारीख को जिस दिन उपरोक्त अधिसूचना जारी की गई थी, यानी 19 अप्रैल, 1957 को, पंजाब सरकार ने अधिनियम के धारा 7 ए के तहत एक अधिसूचना जारी की, जिसका प्रासंगिक भाग इस प्रकार हैः –

''संख्या 4194–सी–लैब–57/661–आर0ए0– औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 7 ए द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, जैसा कि औद्योगिक विवाद (संशोधन और विविध प्रावधान) अधिनियम, 1956 की धारा 4 द्वारा डाला गया है , (1956 की संख्या 36), और इस संबंध में उन्हें सक्षम करने वाली अन्य सभी शक्तियां के तहत, पंजाब के राज्यपाल जालंधर में मुख्यालय के साथ एक औद्योगिक न्यायाधिकरण का गठन और श्री अवतार नारायण गुजराल, बी.ए., एलएल.बी. को नियुक्त करते हैं । आधिकारिक राजपत्र में इस अधिसूचना के प्रकाशन की तारीख से 3 जून, 1957 तक इसका पीठासीन अधिकारी प्रभावी रहेगा ।

यह ध्यान दिया जाएगा कि इस अधिसूचना ने सबसे पहले औद्योगिक न्यायाधिकरण, जालंधर के रूप में एक नए न्यायाधिकरण का गठन किया, और दूसरे इसने श्री ए.एन. गुजराल को 3 जून, 1957 तक इसके पीठासीन अधिकारी के रूप में नियुक्त किया। उस तारीख का महत्व यह है कि, धारा–7 सी(बी) के तहत। संशोधन अधिनियम, 1956 द्वारा सदस्यों के लिए सेवानिवृत्ति की आयु पैंसठ वर्ष निर्धारित की गई थी, और उस प्रावधान के तहत, श्री ए.एन. गुजराल को 3 जून, 1957 को सेवानिवृत्त होना था। पंजाब विधानमंडल ने इस स्तर पर हस्तक्षेप किया और दो कानून बनाए जो वर्तमान विवाद के लिए महत्वपूर्ण हैं। उनमें से एक 1957 का औद्योगिक विवाद (पंजाब संशोधन) अधिनियम 8 था। इस अधिनियम की धारा 3 द्वारा मूल अधिनियम की धारा 7 सी (बी) में संशोधन किया गया एवं ''उसने पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त कर ली है'' शब्दों के स्थान पर ''उसने सड़सठ वर्ष की आयु प्राप्त कर ली है'' शब्दों को प्रतिस्थापित किया गया है। इस प्रकार सेवानिवृत्ति की आयु बढ़ाकर सड़सठ वर्ष कर दी गई। इस अधिनियम के लागू होने से श्री ए.एन. गुजराल का कार्यकाल 3 जून, 1957 से 3 जून, 1959 तक बढ़ाया जा सकता था और यह वास्तव में समय–समय पर जारी की गई कई अधिसूचनाओं द्वारा किया गया था। अपीलकर्ता का तर्क है कि इस कानून का उद्देश्य एक व्यक्ति श्री ए.एन. गुजराल को लाभ पहुंचाना था और इसलिए संविधान के अनुच्छेद 14 के उल्लंघन के कारण शून्य है। अपीलकर्ता के अनुसार, परिणाम यह है कि 3 जून, 1957 के बाद, औद्योगिक न्यायाधिकरण के सदस्य का पद वैध रूप से धारण करने वाला कोई नहीं था ।

पंजाब सरकार द्वारा अधिनियमित दूसरा कानून 1957 का औद्योगिक विवाद (संशोधन और विविध प्रावधान) (पंजाब संशोधन) अधिनियम 9 है। इसके द्वारा संशोधन अधिनियम, 1956 की धारा 30, एक नई उप धारा (2) पेश किया गया। औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के तहत स्थापित न्यायाधिकरण को फिर से गठित करने के लिए राज्य सरकार को अधिकार प्रदान करता है, जहां वे न्यायाधिकरण समाप्त हो गए थे और उनके समक्ष निर्णय के लिए मामले लंबित थे, उस न्यायाधिकरण में वापस जा रहे हैं जिसका गठन अधिनियम की निरस्त धारा 7 के तहत किया गया था । यह याद रखा जाएगा कि 19 अप्रैल, 1957 को एक अधिसूचना जारी की गई थी कि संशोधन अधिनियम, 1956 के धारा 30 के तहत, लंबित मामलों के निपटारे तक या 31 अक्टूबर, 1957 तक, जो भी पहले हो, इसे जीवित रखा गया । हालाँकि, यह अपेक्षा कि उस न्यायाधिकरण के समक्ष कार्यवाही उस तिथि तक पूरी हो जाएगी, साकार नहीं हुई और इसलिए अधिनियम की धारा 33 बी(1), और धारा 30 के संशोधन अधिनियम 1956, जैसा कि पंजाब अधिनियम, 1957 के 9 द्वारा और संशोधित किया गया है, के तहत कार्य किया जा रहा है । पंजाब सरकार ने 31 अक्टूबर 1957 को एक अधिसूचना जारी की जिसमें धारा 7 के तहत गठित पुराने न्यायाधिकरण के समक्ष लंबित मामलों को 19 अप्रैल, 1957 को गठित नए न्यायाधिकरण के समक्ष धारा 7 के तहत धारा 7 ए के तहत स्थानांतरित कर दिया गया । इस अधिसूचना के अनुसार 1955 के संदर्भ संख्या 3 को नए न्यायाधिकरण में स्थानांतरित कर दिया गया था, जिसे 1957 का 30 के रूप में पुनः क्रमांकित किया गया। इस स्थानांतरण के आदेश के विरोध में अपीलार्थी का यह तर्क था कि जिस न्यायाधिकरण के समक्ष मामले को स्थानांतरित किया गया, वह उपरोक्त कारणों से वैध रूप से गठित नहीं था, और उसका कोई कानूनी अस्तित्व नहीं था। दूसरे, 1957 के पंजाब अधिनियम 9 द्वारा पेश किए गए, नए प्रावधान का कोई पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं है और इसके परिणामस्वरूप, 10 मार्च 1957 को पुराने न्यायाधिकरण के समक्ष लंबित कार्यवाही को इस धारा के तहत नए न्यायाधिकरण में स्थानांतरित नहीं किया जा सका।

1957 का वर्तमान संदर्भ 30, 3 जून 1959 तक लंबित था, जब श्री ए.एन. गुजराल सेवानिवृत्त हो गए, पंजाब सरकार ने तब एक अधिसूचना जारी कर पंजाब उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश श्री केशो राम पासी को औद्योगिक न्यायाधिकरण, जालंधर के पीठासीन अधिकारी के रूप में नियुक्त किया। उनके समक्ष, वर्तमान अपीलकर्ता ने 4 सितंबर, 1959 को एक आवेदन दायर किया, जिसमें संदर्भ की सुनवाई पर कई प्रारंभिक आपत्तियां उठाई गईं। 11 सितंबर, 1959 के अपने आदेश द्वारा, न्यायाधिकरण ने इन आपत्तियों को खारिज कर दिया और मामले को गुण–दोष के आधार पर सुनवाई के लिए निश्चित कर दिया । यही इस आदेश की सत्यता है, जिसे अब इस अपील में हमारे सामने चुनौती दी गई है। यद्यपि न्यायाधिकरण के समक्ष संदर्भ के असर पर कई आपत्तियां उठाई गईं। अपीलकर्ता के लिए हमारे सामने प्रस्तुत तर्क निम्नलिखित हैंः –

(1) श्री ए.एन. गुजराल इसके योग्य नहीं थे कि उन्हें अधिनियम की धारा 7(3)(सी) के तहत न्यायाधिकरण में नियुक्त किया जाए परिणामस्वरूप, दिनांक 14 फरवरी 1955 को उनको किया गया संदर्भ अयोग्य था।

(2) कि पंजाब सरकार की अधिसूचना दिनांक अप्रैल 19, 1957 के द्वारा श्री ए.एन. गुजराल को औद्योगिक न्यायाधिकरण, जालंधर के सदस्य के रूप में नियुक्त करना, और उसके बाद उनके कार्यालय के कार्यकाल को बढ़ाने वाली अधिसूचनाएं अनधिकृत और निष्क्रिय हैं।

(3) कि 31 अक्टूबर 1957 की पंजाब सरकार की अधिसूचना, जिसमें पुराने न्यायाधिकरण के समक्ष लंबित कार्यवाही को नए न्यायाधिकरण में स्थानांतरित किया गया था, निष्क्रिय थी, क्योंकि (I) 1957 का पंजाब अधिनियम 08 संविधान के अनुच्छेद 14 के विरोधाभास में होने के कारण शून्य था एवं श्री ए0 एन0 गुजराल का सदस्य के रूप में नियुक्ति भी इस अधिनियम के तहत शून्य था और (II) 1957 के पंजाब अधिनियम 9 द्वारा अधिनियमित धारा 30(2) जिसके तहत स्थानांतरण किया गया था, कार्यवाही के हस्तांतरण को अधिकृत नहीं करता था, जो 10 मार्च 1957 को या उससे पहले लंबित थी ।

(1) सबसे पहले इस तर्क को लेना कि श्री ए.एन. गुजराल 29 अगस्त, 1953 को न्यायाधिकरण में नियुक्त होने के इस तथ्य के कारण योग्य नहीं थे कि उनकी उम्र साठ वर्ष से अधिक थी, यह प्रश्न अधिनियम की धारा 7(3)(सी) के भाषा की निर्वचन का है। धारा 7, जहां तक यह वर्तमान उद्देश्य के लिए इस प्रकार महत्वपूर्ण हैः –

''7. औद्योगिक न्यायाधिकरण.–(1) उपयुक्त सरकार एक या अधिक औद्योगिक न्यायाधिकरण का गठन औद्योगिक विवाद के निर्णय के लिए इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार कर सकती है।

(2) एक न्यायाधिकरण में उतनी संख्या में स्वतंत्र सदस्य शामिल होंगे जितनी उपयुक्त सरकार नियुक्त करना उचित समझे, और जहां न्यायाधिकरण में दो या दो से अधिक सदस्य होते हैं, उनमें से एक को उसके अध्यक्ष के रूप में नियुक्त किया जाएगा।

(3) जहां एक न्यायाधिकरण में केवल एक सदस्य होता है, वह सदस्य, और जहां दो या दो से अधिक सदस्यों के द्वारा गठित हो, तो न्यायाधिकरण का अध्यक्ष, एक ऐसा व्यक्ति होगा जो–

(ए) किसी उच्च न्यायालय का न्यायाधीश है या रहा है, या

(बी) जिला न्यायाधीश है या रहा हैः या

(सी) उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए योग्य है, बशर्ते कि न्यायाधिकरण में इस उप–धारा के तहत कोई भी नियुक्ति किसी ऐसे व्यक्ति की नहीं की जाएगी जो खंड (ए) या (बी) के तहत उस राज्य के उच्च न्यायालय, जिसमें न्यायाधिकरण का सामान्य सीट है या रखने का इरादा है, की मंजूरी के बिना योग्य नहीं है।

श्री ए.एन. गुजराल को एक वकील के नाते धारा 7(3)(सी) के तहत नियुक्त किया गया था। सवाल यह है कि क्या वह उस खण्ड के तहत उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए उस समय योग्य थे। इस बिंदु पर सुनवाई का संवैधानिक प्रावधान अनुच्छेद 217 के अंतर्गत है, जो महत्वपूर्ण है एवं इस प्रकार है –

''217. (1) उच्च न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा भारत के मुख्य न्यायाधीश, राज्य के राज्यपाल से परामर्श के बाद अपने हस्ताक्षर और मुहर के तहत वारंट द्वारा की जाएगी, और न्यायाधीश की नियुक्ति के मामले में मुख्य न्यायाधीश के अलावा, उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश, और अतिरिक्त या कार्यवाहक न्यायाधीश के मामले में, जैसा कि अनुच्छेद 224 में प्रदान किया गया है, और किसी अन्य मामले में तब तक पद धारण करेगा जब तक वह साठ वर्ष की आयु प्राप्त नहीं कर लेता,

परन्तु यह तब जबकि.....

(2) कोई व्यक्ति उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए तब तक योग्य नहीं होगा, जब तक वह भारत का नागरिक न हो और (ए) कम से कम दस वर्षों तक भारत के क्षेत्र में न्यायिक पद पर रहा हो, या

(बी) कम से कम दस वर्षों तक लगातार उच्च न्यायालय या दो या अधिक ऐसे न्यायालयों का वकील रहा हो।

स्पष्टीकरण.....

जबकि अनुच्छेद 217(2) न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए योग्यताएं निर्धारित करता है, अनुच्छेद 217(1) में कहा गया है कि न्यायाधीश साठ वर्ष की आयु प्राप्त करने तक पद पर बना रहेगा। हमारे सामने सारा विवाद इन दोनों खंडों के बीच के अंतरसंबंध को लेकर है। अपीलकर्ता के विद्वान वकील श्री पाठक का तर्क यह है कि यद्यपि अनुच्छेद 217 (1) संदर्भ में, न्यायाधीश के कार्यालय की समाप्ति को संदर्भित करता है, संक्षेप में, यह नियुक्ति के लिए योग्यता निर्धारित करता है ।

क्योंकि साठ वर्ष से अधिक उम्र के व्यक्ति की न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति स्पष्ट रूप से अनुच्छेद 217(1) के प्रतिकूल होगी, भले ही वह अनुच्छेद 217(2) के सभी आवश्यकताओं को पूरा करता हो।

तदनुसार यह तर्क दिया जाता है कि अनुच्छेद 217 के तहत न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए एक निहित योग्यता है कि नियुक्ति के समय व्यक्ति की आयु साठ वर्ष नहीं होनी चाहिए।

हम इस बात से सहमत हैं कि अनुच्छेद 217(1) में यह निहित है कि साठ वर्ष की आयु प्राप्त कर चुके किसी व्यक्ति की न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति पर रोक है, लेकिन हमारे विचार में, यह उस पद पर नियुक्ति को नियंत्रित करने वाली एक शर्त की प्रकृति में है, उस व्यक्ति के संदर्भ में कोई योग्यता नहीं है जिसे वहां नियुक्त किया जाना है। अनुच्छेद की शर्तों और योजना में न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किए जा सकने वाले व्यक्ति की उम्र और कार्यालय को भरने के अनुभव और क्षमता के आधार पर उसकी उपयुक्तता जैसी आवश्यकताओं के बीच स्पष्ट अंतर है । अनुच्छेद 217(1) पूर्व से संबंधित है, और इस रूप में, इसमें कार्यालय की समाप्ति का संदर्भ है और इसलिए इसे उचित रूप से केवल नियुक्ति करने पर प्रतिबंध लगाने के रूप में पढ़ा जा सकता है। अनुच्छेद 217(2) जो स्पष्ट रूप से इसके बिल्कुल विपरीत है जो नियुक्त किए जाने वाले व्यक्ति की योग्यताओं को संदर्भित करता है जैसे कि उसका न्यायिक पद पर होना या कम से कम दस साल की अवधि के लिए वकील होना। हमारा मानना है कि अनुच्छेद की सच्ची संरचना पर आयु के बारे में धारणा कार्यालय की अवधि से जुड़ी एक शर्त है न कि उस पर नियुक्ति के लिए योग्यता ।

श्री पाठक अनुच्छेद 224 और 376 पर भी भरोसा करते है, जो उनके इस तर्क को समर्थन देते हैं कि उम्र को अनुच्छेद के तहत एक निहित योग्यता के रूप में माना जाना चाहिए। अनुच्छेद 217 अनुच्छेद 224 अतिरिक्त और कार्यवाहक न्यायाधीशों की नियुक्ति से संबंधित है और यह खण्ड (1) और (2) में प्रदान किया गया है कि राष्ट्रपति द्वारा अतिरिक्त या कार्यवाहक न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया जाने वाला व्यक्ति विधिवत योग्य व्यक्ति होना चाहिए। इन खण्डों में नियुक्त किये जाने वाले व्यक्ति की उम्र के बारे में कुछ भी नहीं है ।

यह अनुच्छेद 224(3) में प्रदान किया गया है, जो यह अधिनियमित करता है कि ''उच्च न्यायालय के अतिरिक्त या कार्यवाहक न्यायाधीश के रूप में नियुक्त कोई भी व्यक्ति साठ वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद पद धारण नहीं करेगा।'' यह अनुच्छेद भी अनुच्छेद 217 की ही तर्ज पर तैयार किया गया है और मामले को आगे नहीं बढ़ाता और न ही अनुच्छेद 376 में कुछ है, जो इस बिंदु पर और अधिक प्रकाश डालता है । इसमें उन व्यक्तियों का संदर्भ है जो संविधान लागू होने के समय पहली अनुसूची के भाग बी में निर्दिष्ट राज्यों के उच्च न्यायालयों में न्यायाधीश थे, और यह प्रावधान करता है कि वे संविधान के तहत उन राज्यों में उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश बनेंगे। संविधान, और फिर एक विशेष प्रावधान अधिनियमित करता है कि वे ''अनुच्छेद 217 के खंड (1) और (2) में कुछ भी होने के बावजूद, लेकिन उस अनुच्छेद के खंड (1) के प्रावधान के अधीन, ऐसे अवधि की समाप्ति तक पद पर बने रहेंगे जो राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्धारित कर सकते हैं।'' हमें इस अनुच्छेद की शर्तों में ऐसा कुछ भी नहीं दिखता जो इस विवाद को कोई समर्थन देता हो कि उम्र को एक योग्यता के रूप में माना जाना चाहिए।

अनुच्छेद 165 (1) अत्यधिक विचारणीय बिन्दु है कि ''प्रत्येक राज्य का राज्यपाल एक ऐसे व्यक्ति को राज्य के लिए महाधिवक्ता नियुक्त करेगा जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्त होने के योग्य है।'' इस प्रश्न पर चर्चा की गई है कि क्या इस अनुच्छेद की शर्तों के अनुसार, साठ वर्ष की आयु प्राप्त करने वाले व्यक्ति को महाधिवक्ता के रूप में नियुक्त किया जा सकता है। यदि किसी व्यक्ति की उम्र को उसकी योग्यताओं में से एक माना जाए तो ऐसा नहीं हो सकता। जी. डी. करकरे बनाम टी. एल. शेवड़े *आई.एल.आर. (1952) नाग. 409* के निर्णय में मुद्दा उठा कि जहां साठ साल की उम्र में सेवानिवृत्त हुए एक न्यायाधीश को महाधिवक्ता के रूप में नियुक्त किया गया था । नियुक्ति की वैधता को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि उनकी उम्र के कारण उन्हें अयोग्य ठहराया गया था । नागपुर उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों ने यह निर्णय दिया कि संविधान के अनुच्छेद 217 का खंड (1) में केवल उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति की अवधि निर्धारित की गई है और इसकी व्याख्या उनकी नियुक्ति के लिए योग्यता निर्धारित करने के रूप में, नहीं की जा सकती है ।

अपीलकर्ता के लिए यह तर्क दिया गया है कि अनुच्छेद 165 के तहत एक महाधिवक्ता की नियुक्ति अनुच्छेद 217 के तहत एक न्यायाधीश से भिन्न स्तर पर खड़ा हो सकता है। क्योंकि अनुच्छेद 165(3) में विशेष प्रावधान के कारण कि महाधिवक्ता प्रसाद पर्यन्त तक पद पर बना रहता है, जबकि एक न्यायाधीश अच्छे व्यवहार के दौरान पद पर बना रहता है । लेकिन यह अंतर केवल नियुक्ति समाप्त करने के लिए उपयुक्त प्राधिकारी की शक्ति पर निर्भर करता है, न कि कार्यालय में नियुक्त किए जाने वाले व्यक्ति की योग्यता पर। हमारे विचार में जी. डी. करकरे के मामले में अनुच्छेद 217 (1) पर व्याख्या सही है।

यद्यपि अनुच्छेद 217 का सही अर्थ हमारे सामने बहस में बड़े पैमाने पर आया है, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि हम इस अपील में मुख्य रूप से अधिनियम का धारा 7(3) सी की व्याख्या से चिंतित हैं और उसे अंततः अपने स्वयं के संदर्भ में बदलना होगा । धारा 7(3)(ए) न्यायाधिकरण के सदस्य के रूप में वर्तमान या सेवानिवृत्त उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति का प्रावधान करती है । इस उप खंड के तहत स्पष्ट रूप से आयु कोई योग्यता नहीं है, क्योंकि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के लिए सेवानिवृत्ति की आयु साठ है। इसी प्रकार, खंड (बी) एक सदस्य के रूप में, कार्यरत या सेवानिवृत्त जिला न्यायाधीश की नियुक्ति का प्रावधान करता है। एक सेवानिवृत्त जिला न्यायाधीश जो साठ वर्ष से अधिक आयु का है, इस उपधारा के तहत नियुक्ति के लिए पात्र होगा । इस प्रकार उप–खंड (ए) और (बी) के अंतर्गत किसी व्यक्ति की आयु उसकी योग्यता में शामिल नहीं होती है। इसलिए उप–खंड (सी) का अर्थ लगाना वैध होगा। जैसा कि उम्र के आधार पर कोई योग्यता नहीं रखी गई है। लेकिन कहा जाता है कि उप खंड (ए) और (बी) न्यायिक अधिकारियों के संदर्भ में एक अलग समूह बनाते हैं, जबकि, उप खंड (सी) अधिवक्ताओं तक ही सीमित है, जो अपने आप में एक अलग श्रेणी बनाते हैं, और इस अंतर को ध्यान में रखते हुए, उम्र के संबंध में विचार जैसा उप खंड (ए) और (बी) को लागू होते हैं, उप खंड (सी) पर लागू करने की आवश्यकता नहीं है। खंड (ए) और (बी) एक तरफ एवं खंड (सी) दूसरी तरफ में निसंदेह अंतर है।

लेकिन सवाल यह है कि क्या इसका उस अंतर से कोई उचित संबंध है जो नियुक्ति की उम्र के संदर्भ में दोनों वर्गों के बीच किया जाना चाहिए। यदि साठ वर्ष की आयु का एक सेवानिवृत्त न्यायाधीश धारा 7 के तहत न्यायाधिकरण के सदस्य के पद को उपयुक्त रूप से भर सकता है, तो उसी आयु का एक वकील भी ऐसा कर सकता है । हमारे विचार में धारा 7(3)(सी में आयु के संबंध में एक निहित योग्यता आयात करने का कोई आधार नहीं है, जो खंड 7(3)(ए) और (बी) पर लागू नहीं है ।

इस प्रश्न पर पंजाब उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ ने प्रभुदयाल बनाम पंजाब राज्य *ए.आई.आर. (1959) पुंज. 460* में विचार किया था । वहां 29 अगस्त, 1953 की अधिसूचना के तहत श्री ए.एन. गुजराल की नियुक्ति की वैधता, जिस पर अब बहस चल रही है, को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि चूंकि वह उस तारीख को साठ वर्ष से अधिक के थे, इसलिए वह नियुक्त होने के योग्य नहीं थे । धारा 7(3)(सी) के तहत न्यायालय ने जी. डी. करकरे के मामले *आई.एल.आर. (1952) नाग. 409* में निर्णय को मंजूरी देते हुए कहा कि अनुच्छेद 217(1) के तहत उम्र के बारे में धारणा, अनुच्छेद 217(2) न्यायाधीश के पद के लिए योग्यता नहीं थी और साठ वर्ष से अधिक का व्यक्ति धारा 7(3)(सी) के तहत नियुक्ति के लिए योग्य था ।

अपीलकर्ता के लिए धारा 7(सी) की शर्तों पर भरोसा रखा गया है। जिसे 1956 के संशोधन अधिनियम 36 द्वारा धारा 7 के स्थान पर प्रतिस्थापित किया गया था, इस तर्क का समर्थन करते हुए कि धारा 7(3)(सी) के तहत नियुक्ति के लिए उम्र एक योग्यता है ।

धारा 7(सी) इस प्रकार हैः–

''किसी भी व्यक्ति को श्रम न्यायालय, न्यायाधिकरण या राष्ट्रीय न्यायाधिकरण के पीठासीन अधिकारी के पद पर नियुक्त नहीं किया जाएगा, न ही उस पर बने रहेंगे, यदि–

(ए) वह एक स्वतंत्र व्यक्ति नहीं है या

(बी) वह पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त कर चुका है ।''

उस धारा का सीमांत टिप्पणी जिस पर भी भरोसा किया गया था वह इस प्रकार हैः–

''श्रम न्यायालयों, न्यायाधिकरणों और राष्ट्रीय न्यायाधिकरणों के पीठासीन अधिकारियों के लिए अयोग्यताएँ।''

अपीलकर्ता का तर्क यह है कि, धारा 7 सी के तहत योग्यता के रूप में आयु निर्धारित कर विधायिका ने केवल वही स्पष्ट किया जो धारा 7(3)सी) में निहित था और इसलिए धारा 7(3)(सी) में उम्र के आधार पर योग्यता को भी आयात किया जाना चाहिए। हमारी राय में यह अनुमान अनुसरण नहीं करता है। धारा 7 सी में आयु योग्यता का सम्मिलन, निरस्त किए गए धारा 7 के प्रावधानों के कामकाज के आलोक में सदस्यों के लिए सेवानिवृत्ति की आयु निर्धारित करने वाला एक नया प्रावधान विधानमंडल की ओर से जोड़ने के इरादे से अधिक सुसंगत है। हम प्रभुदयाल मामले *ए.आई.आर. (1959) पुंज. 460* में पंजाब उच्च न्यायालय के फैसले से सहमत हैं और मानते हैं कि धारा 7(3)(सी) नियुक्त किए जाने वाले व्यक्ति की उम्र के आधार पर कोई योग्यता नहीं रखता है, और श्री ए. एन. गुजराल की नियुक्ति 29 अगस्त 1953 को को धारा 7(3)(सी) के तहत विधिमान्य किया गया था।

(2) अपीलकर्ता के लिए अगला तर्क यह है कि 19 अप्रैल, 1957 की अधिसूचना, जिसमें श्री ए.एन. गुजराल को न्यायाधिकरण के सदस्य के रूप में नियुक्त किया गया था। 1956 के संशोधन अधिनियम 36 की धारा 30, उस धारा की शर्तों द्वारा अधिकृत नहीं थी और इसलिए उस तिथि से कोई वैध रूप से गठित न्यायाधिकरण नहीं था। धारा 30 इस प्रकार हैः–

''न्यायाधिकरणों के समक्ष लंबित कार्यवाही के संबंध में व्यावृति यदि इस अधिनियम के प्रारंभ होने से ठीक पहले किसी औद्योगिक विवाद के संबंध में औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14) के तहत गठित न्यायाधिकरण (1) के समक्ष कोई कार्यवाही चल रही है।

जैसा कि इस तरह के प्रारंभ से पहले लागू था, विवाद का न्यायनिर्णयन किया जा सकता है और इस तरह के प्रारंभ के बाद उस न्यायाधिकरण द्वारा कार्यवाही का निपटारा किया जा सकता है, जैसे कि यह अधिनियम पारित ही नहीं हुआ था।

हमारे सामने जो तर्क प्रस्तुत किया गया वह यह है कि धारा 7 जिसके तहत श्री ए.एन. गुजराल न्यायाधिकरण का गठन किया गया था, उसे 10 मार्च, 1957 को निरस्त कर दिया गया था एवं 19 अप्रैल, 1957 की अधिसूचना, जिसमें उन्हें न्यायाधिकरण के सदस्य के रूप में नियुक्त किया गया था, अमान्य है। इस तर्क में कोई दम नहीं है. धारा 30 स्पष्ट रूप से इसमें निर्दिष्ट अवधि के लिए न्यायाधिकरण के जीवन को बढ़ाने का प्रावधान करती है, और इसका तात्पर्य आवश्यक रूप से श्री ए.एन. गुजराल को न्यायाधिकरण के रूप में जारी रखने की शक्ति से है, और हमें बिंदु संख्या 3 पर हमारे निर्णय को ध्यान में रखते हुए इसे जोड़ना चाहिए कि इस आपत्ति का व्यावहारिक रूप से कोई महत्व नहीं है।

(3) अंत में, यह तर्क दिया गया है कि 31 अक्टूबर 1957 की अधिसूचना के तहत पुराने न्यायाधिकरण के समक्ष लंबित कार्यवाही को नए न्यायाधिकरण में स्थानांतरित करना अमान्य और निष्क्रिय था। इस विवाद के समर्थन में दो आधारों का आग्रह किया गया। एक तो यह कि श्री ए.एन. गुजराल ने 4 जून, 1957 को पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त की, और उनका कार्यकाल धारा 7 सी के तहत समाप्त हो गया। फिर पंजाब विधानमंडल ने 1957 का अधिनियम 8 अधिनियमित किया, जिसमें धारा 7 सी(बी) के तहत सेवानिवृत्ति की आयु पैंसठ से बढ़ाकर सड़सठ कर दी गई। यह श्री ए.एन. गुजराल को कार्यालय में जारी रखने की दृष्टि से था और यह कानून 3 जून, 1957 को लागू हुआ। ऐसा कहा जाता है कि यह अधिनियम के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है, क्योंकि इसका उद्देश्य श्री ए.एन. गुजराल, किसी विशेष व्यक्ति को लाभ पहुंचाना था और इस विवाद के समर्थन के रूप में अमीरून्निसा बनाम मेहबूब *(1953) एस.सी.आर. 404* में इस न्यायालय के फैसले का संदर्भ दिया गया। इस तर्क में कोई दम नहीं है। वह एक नवाब वलीउद्दौला के संपत्ति से संबंधित विधान है, और इसमें निर्णय किया गया कि वारिस के रूप में दावा करने वाले महबूब बेगुन और कादिरन बेगम के दावे खारिज कर दिए गए और उसे किसी भी अदालत में चुनौती नहीं दिया जा सका

और इस न्यायालय ने माना कि यह अनुच्छेद 14 के प्रतिकूल था, क्योंकि इसने व्यक्तियों को अलग कर दिया और उन्हें उस अधिकार से वंचित कर दिया जो अन्य नागरिकों को अदालत का सहारा लेने के लिए मिलता है । लेकिन 1957 का आक्षेपित अधिनियम, 8 सामान्य अनुप्रयोग का है, उस धारा के तहत पद धारण करने वाले सभी व्यक्तियों के संदर्भ में आयु को बढ़ाकर सड़सठ वर्ष कर दिया गया है । जिस अवसर ने कानून के अधिनियमन को प्रेरित किया वह श्री ए.एन. गुजराल की आसन्न सेवानिवृत्ति हो सकती है । लेकिन यह मानने का आधार नहीं है कि यह भेदभावपूर्ण है और अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है। जब यह अपनी शर्तों पर, सामान्य अनुप्रयोग का है।

स्थानांतरण आदेश के खिलाफ हमले का दूसरा आधार यह है कि यह 1956 के संशोधन अधिनियम 36 की धारा 30(2) के तहत सक्षम नहीं है जैसा कि 1957 के पंजाब अधिनियम 9 द्वारा संशोधित किया गया है। धारा 30(2) इस प्रकार हैः –

''यदि इस अधिनियम के प्रारंभ होने से ठीक पहले औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के तहत गठित न्यायाधिकरण के समक्ष किसी औद्योगिक विवाद के संबंध में कोई कार्यवाही लंबित थी, जैसा कि ऐसे प्रारंभ से पहले लागू था और ऐसी कार्यवाही नहीं की जा सकती थी जिस अवधि के लिए न्यायाधिकरण का गठन किया गया था, उसकी समाप्ति पर न्यायाधिकरण के समाप्त हो जाने के कारण उस न्यायाधिकरण द्वारा निपटाए गए विवाद का निपटारा करने और उस कार्यवाही को निपटाने के लिए राज्य सरकार उस न्यायाधिकरण का पुनर्गठन कर सकती है। ऐसी शुरुआत के बाद जैसे कि यह अधिनियम पारित नहीं हुआ है, और उस न्यायाधिकरण द्वारा कार्यवाही उस चरण से जारी रखी जा सकती है जिस अवस्था पर इसे छोड़ा गया था'',

हमारे सामने यह तर्क दिया गया है कि इस प्रावधान का कोई पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं है और इसके परिणामस्वरूप जो कार्यवाही 10 मार्च, 1957 को पुराने न्यायाधिकरण के समक्ष लंबित थी, उसे इस धारा के तहत नए न्यायाधिकरण में स्थानांतरित नहीं किया जा सकता है। यह विवाद स्पष्ट रूप से अस्थिर है, क्योंकि धारा 30(2) का पूरा उद्देश्य उन विवादों की सुनवाई प्रदान करना है जो पुराने न्यायाधिकरण के समक्ष लंबित थे, और इसका संचालन पूरी तरह से पूर्वव्यापी है। इसलिए इस तर्क को अवश्य खारिज किया जाना चाहिए।

परिणामस्वरूप, अपील विफल हो जाता है और खर्चे के साथ खारिज किया गया।

अपील खारिज।